National Journal of Multidisciplinary Research and Development
ISSN: 2455-9040; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 28-01-2021; Accepted: 13-02-2021; Published: 28-02-2021
www.nationaljournals.com
Volume 6; Issue 1; 2021; Page No. 23-25

कोरोना काल और साहित्य में संवेदना का दौर

डॉ. हसीना बानो
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभागाध्यक्ष, हमीदिया गर्ल्स डिग्री कॉलेज, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
कोरोना के इस संक्रमण काल में हमारे जीवन और समाज में व्यापक परिवर्तन हुआ है। कोरोना संक्रमण काल का प्रभाव अर्थव्यवस्था, सामाजिक व्यवस्था, देश के सभी छोटे–बड़े व्यापारियों, गरीब श्रमिकों, प्रत्येक वर्ग पर दिखाई पड़ता है। कोरोना संक्रमण काल में मानव जीवन का प्रत्येक क्षेत्र घातक रूप से मानसिक और शारीरिक प्रभाव से ग्रसित हुआ है। जहाँ एक तरफ प्रगति की ओर हमारा देश बढ़ रहा है वहीं दूसरी ओर इस कोरोना काल के दौर में, जो परिवर्तन हो रहा है, उससे हमारी गति और प्रगति स्थिर हो गयी है। कोरोना काल का यह समय असाधारण मानवीय संकट का समय बन गया है। कोरोना काल में सामाजिक जीवन, शैक्षिक वातावरण, अर्थव्यवस्था इतनी प्रभावित हो रही है कि स्वयं को ऐसे में संयोजित करना सरल नहीं है। लोगों में घबराहट, बेचैनी, भय जीवन की श्रृंखला का तोड़–फोड़ रहें हैं। शिक्षा के क्षेत्र में कोरोना ने इतनी विषम समस्या खड़ी कर दी है जो बच्चों के बुनियादी शिक्षा को अधिक प्रभावित कर रही है। उच्च शिक्षा में यह बदलाव, यह परिवर्तन जहाँ आगे की तरफ ले जाती है, डिजिटल शिक्षा के नये विकल्प विकसित हो रहे है। वहीं बुनियादी शिक्षा, जहाँ तक मेरा विचार है थोड़ा कमजोर पड़ रहा है। ऐसे में हमें अपने ज्ञान और साहित्य को सक्षम हथियार के रूप में विकसित करना होगा। साहित्य में संवेदना की अभिव्यक्ति ही हमें प्रेरणा, भाव और भाषा से प्रेरित कर सकती है।

मूल शब्दः कोरोना काल, अर्थव्यवस्था, सामाजिक व्यवस्था, डिजिटल शिक्षा

प्रस्तावना
कोरोना संकट ने हमारी उच्च शिक्षा व्यवस्था के मूल ढांचे को छिन्न–भिन्न कर दिया है। ऐसे में चूँकि अब समाज स्वयं बदलने को स्वतः बाध्य है, इसलिये समय के रहते वह परिवर्तन हर क्षेत्र में कर रहा है। भारत जैसे देश में हमे गरीब उपेक्षित और ग्रामीण क्षेत्र में बसे सामाजिक समूहों में इन्टरनेट रखने, प्रयोग करने के लिये अधिक से अधिक जोर देना होगा। कोरोना के चलते ऑनलाइन कार्य की गतिविधियों की जरूरत है जिसमें हमारे साहित्य की महत्वपूर्ण योगदान है। साहित्य संवेदना हमें अभिभूत प्रेरित करते हैं। साहित्य में संवेदना से अभिप्राय वह अनुभूति है जो सूक्ष्म से सूक्ष्म प्रभाव को ग्रहण करने की क्षमता से प्रेरित होती है। वह आधुनिक बोध कराने की क्षमता रखती हैं मानव अस्तित्व ही बुनियादी ज़रूरते हैं। संवेदना का धरातल चाहे जिस प्रकार की अभिव्यक्ति हो, उसे साहित्य के माध्यम से ही मिलती है। नयी अनुभूति, नयी भाषिक अर्थवेत्ता नये अनुभव तथा मानव सम्बन्धों के परिवर्तन, सामाजिक परिवर्तन की सूक्ष्म परख से ही साहित्य संवेदना स्पष्ट हो जाती है। भाव, भाषा अभिव्यक्ति और प्रेरणा यही तत्व साहित्य की संवेदना के अर्थ प्रदान करते हैं। सबसे पहले संवेदना का स्पर्श व्यक्ति को सक्रिय करता है। व्यक्ति–व्यक्ति से समाज का निर्माण होता है। बाद में यही वैयक्तिक संवेदना सामाजिक संवेदना का रूप प्राप्त कर साहित्यकार की लेखनी द्वारा साहित्य में प्रतिष्ठा प्राप्त करती है। मन में जो संवेदनाओं की स्थिति बनती है वह या तो हमारी उत्तेजनायें होती हैं जो आन्तरिक और शारीरिक, मानसिक पीड़ा, भूख, प्यास, थकान आदि दशाओं से प्रभावित होकर उत्पन्न होती है ओर फिर वही साहित्य में संवेदना उभर कर आती है जो मानवता की कसौटी पर कसकर परखकर अपने निजी अनुभवों के साथ जोड़कर पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है और आधुनिक बोध सामाजिक गतिविधियों का पारदर्शी रूप से हमें परिचित कराता है जो साहित्य की तमाम विधाओं, कहानी, नाटक, उपन्यास, कविता के रूप में हमें साहित्य में व्यापक रूप से मिलता है।

हमारी अनुभूति–संवेदना के साथ जुड़कर साहित्य की दृष्टि में जुड़ जाती है। व्यक्ति को समाज में हर प्रकार के अनुभव मिलते है। उन्ही की प्रतिक्रिया उसके व्यक्तित्व विशेष में परिवर्तित होकर घटित होने लगता है। आज साहित्यकारों की मूल दृष्टि में भी यही परिवर्तन देखने को मिलता है। समाज में रहते हुए सामाजिक गतिविधियों, व्यवहारों का प्रभाव हम पर ओर हमारा प्रभाव समाज पर पड़ना स्वाभाविक है। इसी से समाज भी परिवर्तन की प्रक्रिया दिशा की ओर अग्रसर होता है। अन्ततः इस परिवर्तन का प्रभाव हमारे समकालीन साहित्य, साहित्यकारों, कवियों, रचनाकारों पर पड़ता है। इस प्रभाव के फलस्वरूप परम्परा संवेदना बदल जाया करती है। संवेदना पविवेश समाज और मनः स्थिति के धरातल पर होने वाले सूक्ष्म अनुभवों पर निर्भर करती है। क्योंकि समाज निरन्तर गतिशील ओर पविर्तनशील है और संवेदना समाज की वह आधारशिला है जिस पर सभ्यता और संस्कृति का महल खड़ा होता है। समाज में संवेदना सदैव मिट्टी बनती है और बदलती रहती है। साहित्यकार प्रत्येक स्तर पर समाज से जुड़ा हुआ है अर्थात वह समाज के रहन–सहन, आचार–विचार, नैतिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि से। वस्तुतः वैयक्तिक संवेदना सामाजिक संवेदना से जुड़ी हुई है। व्यक्ति और समाज का समन्वय बदलती संवेदना के विकास के लिये आवश्यक है क्योंकि व्यक्ति समाज और साहित्य का अटूट सम्बन्ध है बिना इसके हम न अपनी अनुभूति को न सामाजिक वैश्विक वातावरण अपने साहित्य में लिपिबद्ध कर सकते है न हम अपनी सामाजिक संवेदना को दूसरों तक (पाठको तक) पहुँच सकते है। आज इस औद्योगीकरण तकनीकी दौर, आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में जो सामाजिक संवेदना का बदलता विकराल रूप दिखायी दे रहा है। इतिहास भी इसका साक्षी है। इतिहास में जब भी परिवर्तन आया है तो उसी के अनुरूप संवेदना में भी परिवर्तन साकार हुआ है और आज भी ऐसा ही देखने को मिलेगा। भविष्य में साहित्यकारों की सोच में बदलाव के साथ साहित्य के स्वरूप में संवेदना का वह स्वरूप भी हमें देखने को मिलेगा कि जिसका साक्ष्य इतिहास होगा। आधुनिक काल के समकालीन कवियों, साहित्यकारों नागार्जुन, अज्ञेय, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, रघुवीर सहाय की कविताओं में देखी जा सकती हैं साहित्यकार दुष्यन्त कुमार की यह पंक्ति संवेदना का जीवन्त रूप प्रस्तुत करता है–

न हो कमीज़ तो घुटनों से पेट ढक लेंगे ये लोग कितने मुनासिब है इस यात्रा के लिये।

साहित्य की सबसे बड़ी सुन्दरता है कि इसमें 'मैं शब्द की कोई जगह नहीं है क्योंकि जब साहित्य की गंगा बहती है तो इसमें सभी आम–जन लाभान्वित होते है। साहित्य समाज और संस्कृति को सार्थक दिशा देने का एक सशक्त विकल्प है। यह बुद्धि, आत्मा को निर्मल, उज्जवल बनाता है। साहित्य जीवन मूल्यों को दर्शाता है। वह किसी न किसी रूप में जीवन मूल्यों से जुड़ा होता है, जो कहानी, कविता, आत्मकथा, संस्मरण के रूप में गुम्फित होकर जीवन की यर्थाथता को प्रकट करता है। साहित्य समाज के देशकाल सामाजिक वातावरण आर्थिक स्थितियों को समझने में मदद करता है। आज समाज की बदलती दशा और दिशाओं का परिचय देते हुए जीवन मूल्यों को दर्शाता है।

जहाँ तक भारतीय साहित्य में जीवन मूल्यों का प्रश्न है यह समय–समय पर कई तरह से अभिव्यक्ति हुई है। 19वीं शताब्दी में देश, विदेशी शासन से त्रस्त था अतः ऐसे में विशेषकर हिन्दी में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से लेकर प्रेमचन्द्र, सुभद्राकुमारी चौहान व अन्य सभी ने देश भक्ति, भ्रष्टाचार व शोषण से उन्मूलन, गांधी विचारधारा और नीतिपरक विचार धारा को साहित्य के जरिये पहुँचाया जिसमें तत्कालीन समाज के सभी वर्ग प्ररित और लाभान्वित हुअ। 19वीं सदी का साहित्य हिन्दी में कालजयी माना जाता है।

इसी सदी में रामयण, महाभारत, पंचतन्त्र और गीता की रचनायें लोगों को हिन्दी के साथ–साथ जन भाषाओं में अनुवाद के माध्यम से पढ़ने को मिली जो संस्कृत, अवधी और भाषाओं में हुआ करती है। इसी दौर में हमारा राष्ट्रगीत ''जन–गण–मन और तरान–ए–हिन्द'', ''सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा'' विभिन्न तरह के साहित्य से मानव समाज के साथ भाषाओं का भी फायदा हुआ।

इस प्रकार 19वीं शताब्दी के साहित्य ने बीसवी शताब्दी के साहित्य की दिशायें भी तय कर दी। हम आज़ादी के बाद के धीरे–धीरे परम्पराओं से हटकर आधुनिकता अपनाने लगे। वैज्ञानिक और तकनीकी विकास से जीवन अरामदायक बन गया। कम समय में ज्यादा कमाने की सोच, आर्थिक रूप से और मजबूत होते गये परन्तु सारी मानवीय संवेदना दूसरी तरफ कम होती गयी, एक–दूसरे से मिलना कम हो गया और सारी विचारधारा केवल साहित्य में प्रतिबिम्बित होते रहे। इन्हीं साहित्यिक रचनाओं के आधार पर कई फिल्में बनी। जैसे प्रेमचन्द्र की कहानी पर बनी ''शतरंज के खिलाड़ी'' फरणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यास पर बनी ''तीसरी कसम'' इसके उदाहरण है। कुछ आत्मकथायें कालजयी से हुई जिसमें गांधी जी की 'सत्य के प्रयोग' है। गांधी जी की यह जीवनी हर उम्र के लोगों में सच्ची घटनाओं के जरियें जीवन मूल्य भर देने के लिये काफी है। इस साहित्य के माध्यम से हमारी सभ्यता, संस्कृति और जीवन मूल्यों को दूसरों तक दूर–दूर तक पहुँचाने में कामयाब रही।

हमारे जीवन के साथ मूल्य शब्द जुड़ा है। मूल्य केवल मानव व्यवहार की दिशा निर्धारण नहीं करती बल्कि अपने आप में एक आदर्श और उद्देश्य की भावना पिरोहित है। साहित्य और मूल्य का अटूट रिश्ता है। मनुष्य ने अपना भौतिक विकास तो बहुत कर लिया पर अपने उस मूल्य को भूलता जा रहा है जो हमारी भारतीय संस्कृति हमें प्रेरित कर रही है। आज मूल्यों का स्वरूप भी बदल गया है जहाँ स्वार्थ की भावना थी वहाँ अब परमार्थ की भावना पनप रही है। इस संक्रमण काल में अपनी प्राचीन संस्कृति सभ्यता को अपनाने को मजबूर कर रही है। जिसमें सत्यम, शिवम, सुन्दरम का स्थान निहित है जो नैतिक मूल्य, त्याग अहिंसा सेवा, न्याय सौहार्दपूर्ण, परोपकार की भावना को उद्वेलित कर रही है। आज नैतिक मूल्यों के साथ आर्थिक मूल्यों का भी विघटन हो रहा है। बेरोजगारी, गरीबी, महंगाई बढ़ती जा रही है।

चूँकि साहित्य को समाज का प्रतिबिम्ब माना जाता रहा है और यही वह वजह है समाज में मूल्यों की जो स्थितियाँ है वही हम साहित्य में देखते हैं। किसी ने कहानी के माध्यम से तो किसी ने कविता, नाटक, उपन्यास के माध्यम से समाज का जीता जागता सामाजिक भावनाओं, समस्याओं, विचारों को अपनी संवेदनात्मक दृष्टि से प्रस्तुत किया है। इतिहास इन्ही जीवन मूल्यों के विकास को रेखांकित करने का उपक्रम है। हिन्दी साहित्य के साथ संवेदना का इतिहास भी जुड़ा हुआ है। साहित्य में संवेदना का विकास करना, रचनाकार, साहित्यकार के कर्म का एक आवश्यक अंग है। संसार का कोई अनुभव जब चेतना में बिम्बित होता है तो साहित्य में उसका लिपिबद्ध लेखक सृजनात्मक संवेदना के साथ प्रस्तुत करता है। अरस्तु ने संगीत को समाज के लिये उपादेय माना है वह कविता को वांछनीय मानता है क्योंकि उसकी दृष्टि में कविता संवेदनाओं और वासनाओं, विषमताओं को परिष्कृत करती है। साहित्य और संगीत की जरूरतें एक–दूसरे से घुल–मिल गयी है जो मानवीय संवेदना से सीधे सम्बन्ध रखती है।

'रहस्यवाद' शीर्षक निबन्ध में जयशंकर प्रसाद ने इस स्थिति की व्याख्या यह कह कर की– दुःखवाद जिस मन शैली का फल था वह बुद्धि और विवेक के आधार पर, तर्को के आश्रय में बढ़ती ही रही। हिन्दी साहित्य में आचार्य राम चन्द्र शुक्ल ने व्यापक उद्देश्य के प्रसंग में लोकमंगल की बात कहते हैं पर साहित्य की विकास प्रक्रिया के सन्दर्भ में जनता को महत्व देते हैं जिसके अन्तर्गत समाज के सभी वर्ग, सभी धर्म के वर्ग (व्यवहार, संस्कृति, सभ्यता) सभी आ जाते है। तत्कालीन सामाजिक समस्याओं से पूरित तुलसीदास, कबीरदास, सूरदास, निराला, जयशंकर प्रसाद आदि की रचनायें इससे अछूती नहीं रही हैं। प्रत्येक साहित्यकारों, रचनाकारों ने सम सामयिक समस्याओं परिस्थितियों का अवलोकन कर सूक्ष्म मर्म चित्र प्रस्तुत किया है जो आज भी प्रासंगिक है।

इस कोरोना के संक्रमण काल में हमारी आर्थिक, सामाजिक चुनौतियों ने हमें और अधिक चिन्तनशील बना दिया है। विविध प्रकार की स्थितियों का मार्मिक दृश्य प्रस्तुत करना साहित्यकारों का दायित्व बन गया। आज ऐसी विषम परिस्थितियों से हम सब गुजर रहे हैं। जहाँ साहित्यकारों का दायित्व और अधिक बढ़ गया है। तकनीकी दौर में हमें यही आशा और प्रगति की अग्रसर करने में सहायक है। जहाँ हम घर बैठकर सुचारु रूप से संवेदना से अभिभूत होकर अपनी बात को पाठक के सामने रख सकते हैं जो आज हमारे देश की समाज की, आवश्यकता है। आधुनिक युग में संवेदना का अर्थ विस्तार होने के कारण साहित्य में इसका प्रचलन तेजी से बढ़ता जा रहा है। यह साहित्य की प्राणधारा कही जाने लगी है। काव्य की धुरी संवेदना का सम्बन्ध भावों से जुड़ा हुआ है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपनी प्रसिद्ध निबन्ध ''कविता क्या है'' में काव्यानुशीलन को ''भावयोग'' की संज्ञा दी है। कवि, लेखक, रचनाकार अपनी सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित होकर जिन अनुभूतियों की अभिव्यक्ति अपने साहित्य में करता है वह संवेदनात्मक ही होती है जो हमें अनुप्रेरित और प्रभावित करती हैं व्यक्ति समाज की प्रथम इकाई है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने साहित्य को जनता की चित्तवृत्तियों का संचित प्रतिबिम्ब कहा है, यहाँ जनता के शब्द के मूल में व्यक्ति ही तो हैं उसी की संवेदनायें ही संचित होकर साहित्य बनती है। व्यक्ति के निजी अनुभव, सुख–दुख, आशा–निराशा, संघर्ष–पलायन, प्रेम–घृणा आदि उसके मन को उद्वेलित करती है। कवि भावुक होने के कारण अधिक उद्वेलित होता है। मुक्तिबोध काव्य को एक आत्मपरक प्रयास मानते हुए लिखते है– यदि कवि अपनी आत्मपरक कविता में अपनी व्यथा नहीं प्रकट करेगा तो फिर काहे में करेगा। उनकी 'ब्रह्मराक्षस'' कविता युग का आत्मचेतस ही विश्व चेतस है। हमारी आत्माओं का कुल योग

है। वह सांस्कृतिक मानव विराट आत्मा का प्रतिबिम्बन है। मानवीय संवेदनाओं का, मानव सभ्यता के इतिहास का संवेदनात्मक बिम्ब प्रकट करता है। वह समाज के शोषण कलंक से मुक्त नही हो पाया है, वह ब्रह्मराक्षस प्राणजल बावड़ी में स्नान कर रहा है जिसका सूक्ष्म रूप दर्शाता है–

बावड़ी की उन घनी गहराइयों में शून्य ब्रह्मराक्षस एक बैठा है,
वह भीतर से उमड़ती गूंज की भी गूंज, हड़बड़ाहट–शब्द पागल से,गहन की अनुमानिता, तन की मलीनता, दूर करने के लिये प्रतिपल,पाप छाया दूर करने के लिये, दिन रात, स्वच्छ करने ब्रह्मराक्षस,घिस रहा है देह, हाथ के पंजे बराबर, वाह छाती मुंह छपाछप, खूब करते साफ फिर भी मैल–फिर भी मैल।

ब्रह्मराक्षस के स्नान को हम स्वयं के आत्मजल से स्नान के रूप में जब ग्रहण करते हैं तब जगत समीक्षा के तार हमारे मस्तिष्क में स्वयं बुनते चले जाते है। मानवीय करुणा और संवेदना के प्राण मे स्याह संवेदना का प्रत्यक्षीकरण है। सफल उन्नत लोग हम बुद्धिजीवी से अपेक्षा करता है। वह नयी रोशनी से उच्च शोषणविहीन मानवीय संस्कृति की स्थापना के लिये प्रयत्नशील होता है। वह सत्य, शिवम की संस्कृति का आख्यान करती चांदनी खिलखिलाती है। वह लोगों को जागरुक करती है। जो आज के इस संक्रमणकाल में हमारा मार्ग प्रदर्शित करती है–

तुम्हारे पास, हमारे पास, सिर्फ एक चीज है।
ईमान का डण्डा है, बुद्धि का बल्लम है, अभय की गेती है,
हृदय की तगारी है– तसला है।
नये–नये बनाने के लिये भवन, आत्मा के, मुनष्य के।

इस तरह सामाजिक संवेदना ही हमें युगीन यथार्थ से जोड़ती है, समाज परिवर्तनशील है। अतः सामाजिक संवेदनायें भी समय के साथ परिवर्तित होती रहती है। समकालीन साहित्य समाज की परिस्थितियों, विंसगतियों, विषमताओं, क्रूरताओं का व्यापक रूप संवेदनाओं में निहित हो पारदर्शी रूप प्रस्तुत करता है जो हमें हर तरफ हर युग के साहित्य में कविता, कहानी, नाटक, लेख निबन्ध अछूता नहीं रहा है। राष्ट्रवादी कवियों मैथिलीशरण गुप्त, रामधारी सिंह ने राष्ट्र से ओत–प्रोत रचनाओं से हम सबको देश प्रेम, राष्ट्रप्रेम की अनुगूंज से अभिप्रेरित किया है। मैथिलीशरण गुप्त की ''भारत भारती'' में यह भाव सूक्ष्म दृष्टि को आलोकित करती है जो आज की प्रासंगिकता है–

मानस भवन में आर्यजन जिसकी उतारे आरती।
भगवान भरतवर्ष में गूंजे हमारी भारती।

यह सामाजिक चेतना, राष्ट्रवादी चेतना, सांस्कृतिक चेतना, मानवतावादी चेतना का प्रतिदर्श है अपनी चर्चित रचना में उन्होंने स्पष्ट कहा है–

हम कौन थे? क्या हो गये हैं और क्या होंगे अभी, आओं विचारें आज मिलकर यह समस्यायें सभी।

आज की प्रासंगिकता में ऐसा ही देखा जा रहा है जो हमें कुछ करने को, कुछ सोंचने को हमारे उत्तरदायित्व के निर्वाह पर ज़ोर दे रहा है।

इस श्रृंखला में देखा जाये तो जयशंकर प्रसाद की कविता भी मानवीय संवेदना और जीवन मूल्यों से जुड़ी दिखाई देती है। चूँकि वे सौन्दर्य के उपासक थे उन्होंने श्रद्धा और मनु की स्थिति का उनके संवेदना का मार्मिक चित्र प्रस्तुत करते हुए सांसारिक आध्यात्मिक दृष्टिकोण को स्पष्ट किया है, जीवन में अन्धकार से उजाले की तरफ ले जाने और विफलता से सफलता, उदासीनता से उबरने की सलाह दी है–

विषमता की पीड़ा से व्यस्त, हो रहा स्पंदित विश्व महान।
यही सुख–दुःख विकास का सत्य, यह भूमा का मधुमय ज्ञान ।
जिसे तुम समझे हो अभिशाप, जगत की ज्वालाओं का मूल।
ईश का यह रहस्य वरदान, कभी मत जाओ इसको भूल।

मानवीय संवेदना का सुन्दर उदाहरण है जो हमें प्रेरित कर रहा है। एक स्थान जयशंकर प्रसाद जी कहते है–

और यह क्या तुम सुनते नहीं, विधाता का मंगल वरदान,
शक्तिशाली हो, विजयी बनो, विश्व में गूंज रहा जय ज्ञान।

केदारनाथ की रचनायें भी गरीब श्रमिक किसानों की संवेदनाओं को अभिव्यक्त करती है। जन की पीड़ा, जन का अनुभव, जन की भाषा में ही अभिव्यक्त करते हैं। उनकी काव्य संवेदना में गरीबों, शाषितों और संघर्ष, वंचितों की पीड़ा का सन्देश है। उनका आत्मसंघर्ष ही समाज संघर्ष विश्व संघर्ष हैं ''किसान'' कविता में अपने भाव को प्रकार प्रकट किया है–

शोषण की प्रत्येक प्रथा का, अन्धियर गहन मिटाये जा
नये जनम का नया उजाला, धरती पर बरसाये जा।
गाँव नगर बे–घर वालों के, लाखों–लाख बसाये जो
अब अपनी सरकार बना कर, जीवन में मुस्काये जा।

और आज ऐसी ही जरूरत है हम में अपने में ऊर्जा, उत्तेजना भरने की जिस दौर से हम गुज़र रहे है हमारी यही पुकार है, ऐसी ही ऊर्जा की आवश्यकता है जो साहित्यकार, रचनाकार एवं कवि के माध्यम से हो सकता है। जो समय की धारा प्रवाहित हो रही है, हम अपनी आत्म संवेदनाओं से अभिभूत होकर सामाजिक संवेदनाओं को अच्छी तरह प्रकट कर सकते है क्योंकि समाज परिवर्तनशीलता के साथ हमारा साहित्यिक दृष्टिकोण बदल रहा है और आने वाले समय में हम साहित्यकारों का योगदान और अधिक मानवीय संवेदना से भरपूर होगा। ऐसे में हमारा संकल्प बुद्धिजीवियों के लिये और प्रेरणादायक बनेगा।

सन्दभ ग्रन्थ

1. हिन्दी साहित्य बीसवी शताब्दी–नन्द दुलारे बाजपेयी
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
3. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास–रामस्वरूप चतुर्वेदी
4. ऊषा प्रियम्बदा की कहानियों में टूटते जीवन मूल्यों का यथार्थ चित्रण
5. हिन्दी कहानी अपनी जुबानी–इन्द्रनाथ मदान
6. युग क्या होते है और?–सुनीता जैन
7. मुक्तिबोध की कविता–ब्रह्मराक्षस
8. केदारनाथ की गीत चेतना, परिवेशगत जीवन एवं साहित्य
9. आधुनिक और हिन्दी उपन्यास–इन्द्रनाथ मदान